

संगीत की उच्च शिक्षा और सांगीतिक परीक्षण एवं योग्यताएं

डॉ० अल्पना

सहायक आचार्या

संगीत-वादन सितार

कनोहर लाल स्नातकोत्तर महिला महाविद्यालय, मेरठ

ईमेल: alpanamusic30@gmail.com

सारांश

शिक्षा एक निरंतर अथवा गतिशील प्रक्रिया है। यह आन्तरिक बुद्धि तथा विकास की कभी ना खत्म होने वाली प्रक्रिया है और इसकी अवधि जन्म से मृत्यु तक फैली है। अगर शिक्षा को ऐतिहासिक दृष्टि से देखें तो प्राचीन काल में गुरु शिष्य परम्परा, मध्यकाल में घराना शिक्षण पद्धति और आधुनिक काल में संस्थागत शिक्षा पद्धति के द्वारा शिक्षा दी जाती रही है। भारत में शिक्षा दो प्रकार से प्राप्त की जा रही है—व्यक्तिगत शिक्षा पद्धति और संस्थागत शिक्षा पद्धति। संगीत सम्बन्धी शिक्षा के सम्बन्ध में संस्थाओं में भी दो प्रकार से शिक्षा दी जा रही है। एक संगीत विषय के साथ अन्य विषयों को पढ़कर पढ़ाना तथा दूसरी केवल संगीत विषय के शिक्षार्थी के रूप में अपनी विश्वविद्यालयी शिक्षा को पूरा करना। उच्च शिक्षा के चार घटक माने जाते हैं विद्यार्थी, शिक्षक, शिक्षण पद्धति और मूल्यांकन। इन सभी घटकों से सम्बन्धित अनेक समस्याओं का सामना विद्यार्थी और शिक्षकों को करना पड़ता है। लेकिन अगर वर्तमान में एक नयी समस्या को देखें तो वह है, उच्च शिक्षा हेतु संगीत की कक्षाओं में विद्यार्थी के प्रवेश सम्बन्धी संगीत विषय का आवंटन का प्रारूप। जिसमें बिना सांगीतिक योग्यता के संगीत के संगीतार्थी या विद्यार्थी बन जाना। संगीत में पूर्व परीक्षा के बिना, कोर्सेज में प्रवेश होना और बिना सांगीतिक योग्यता के प्रवेश मिलना चिंताजनक है। संगीत शिक्षा हेतु सांगीतिक परीक्षण ना सही लेकिन कम से कम शारीरिक, मानसिक स्तर की जांच पड़ताल के जरूरी होने के साथ ही संगीत में क्षमता का आंकलन संगीत के मूल तत्व – स्वर और लय के संस्कारों से ग्रहित हो संगीत विद्यार्थी। उच्च शिक्षा हेतु संगीत की कक्षाओं में विद्यार्थी के प्रवेश सम्बन्धी विश्वविद्यालय द्वारा एक बोर्ड गठित होना चाहिए और विद्यार्थी की सांगीतिक योग्यता को निखारना चाहिए जिससे संगीत विषय की गुणवत्ता ही नहीं सुधरेंगी अपितु श्रवण संवेदना को विकसित करके उन्हें संगीत का आनंद उठाने के योग्य बनाया जा सकता है।

मुख्य शब्द: विद्यार्थी, योग्यताएं, शिक्षा, उच्च शिक्षा, शिक्षण, संगीत, विश्वविद्यालय, सांगीतिक।

Reference to this paper should be made as follows:

Received: 20-05-26
Approved: 30-06-26

डॉ० अल्पना

संगीत की उच्च शिक्षा और
सांगीतिक परीक्षण एवं योग्यताएं

Vol. XVII, Sp. Issue July.2026
Article No.03, Pg. 009-016

Similarity Check: 08%

Online available at
<https://anubooks.com/special-issues?url=jgv-si-klsmm-mrt-july-2026>

DOI: <https://doi.org/10.31995/jgv.2026.v17iSI07.003>

**This article has been peer-reviewed by the Review Committee of JGV.*

शिक्षा तथा मानव जाति का जन्म-जन्मान्तर का सम्बन्ध है। यह आन्तरिक बुद्धि तथा विकास की कभी ना खत्म होने वाली प्रक्रिया है और इसकी अवधि जन्म से मृत्यु तक फैली है। मनुष्य प्रतिदिन – प्रतिक्षण कुछ ना कुछ सीखता ही रहता है। अतः शिक्षा एक निरन्तर तथा गतिशील प्रक्रिया है। सम्पूर्ण विश्व में ऐसा कोई व्यक्ति नहीं है जिसने बिना सीखे ही, जीवन व्यतीत कर लिया हो क्योंकि सीखते रहना ही, जीवन है। बच्चा सीखने की प्रक्रिया में सर्वप्रथम अपने परिवार से सीखना प्रारम्भ करता है और फिर परिवार के बाद समाज से सीखता है तत्पश्चात् विद्यालय में गुरु से, इसके बाद सीखने के तरीके कई वर्गों में बंट जाते हैं लेकिन बच्चे की प्रथम गुरु उसकी माँ ही मानी जाती है। लगभग इसी प्रकार व्यक्ति की शैक्षणिक यात्रा शुरू होती है।

भारत में संगीत की शिक्षा प्रणाली मुख्य रूप से दो प्रकार की रही है – एक व्यक्तिगत शिक्षा और दूसरी संस्थागत शिक्षा। व्यक्तिगत शिक्षा पद्धति- जिसे गुरुकुल पद्धति के रूप में जाना जाता है। वैदिक युग में संगीत शिक्षा गुरु शिष्य परम्परा द्वारा दी जाती थी जो कि मुख्यतः मौखिक एवं प्रदर्शनात्मक कला है। शिष्य गुरुकुल में रहकर गुरुमुख से निःसृत वाणी को कठोर नियमित एवं सुसंस्कृत जीवन व्यतीत करते हुए शिक्षा ग्रहण करता था। निरन्तर ग्रहण करते रहना ही शिक्षा का एक मात्र साधन था, जिसके अन्तर्गत जिन विद्यार्थियों को संगीत शिक्षा ग्रहण करने की प्रबल इच्छा होती थी वे गुरु के आश्रम में कई वर्ष लगातार रहकर संगीत की शिक्षा लेते थे और साथ ही गुरु की सेवा तथा गृह कार्य में भी पूर्ण रूप से सहयोग देते थे। इस प्रकार यह पद्धति गुरु शिष्य प्रणाली या परम्परा के नाम से पहचानी जाने लगी। गुरु शिष्य परम्परा में गुरु और शिष्य के मध्य आत्मिक सम्बन्ध और सम्मान योग्य माना जाता रहा है। गुरु शिष्य परम्परा ने धीरे-धीरे घरानों का स्वरूप ले लिया।

जिसमें विशेष संगीत परम्परा, शैली, शिक्षण पद्धति किसी गुरु या विशेष स्थान से होकर पीढ़ियों तक चलती है। प्रत्येक घराने की एक अलग कलात्मक अनुशासनीय विधि होती है। जिसमें एक नयी शैली जन्म लेती है, अपनी अलग शैली के कारण अलग बंदिशे, अलग-अलग प्रस्तुतीकरण ढंग, आदि होता है और इसके अलग-अलग सिद्धांत भी होते हैं जिसमें अपने व्यक्तित्व की भी छाप अंकित करके शिष्यों को सिखाया जाता है और इस प्रकार मध्यकाल में घराना शिक्षण पद्धति का बीजारोपण हुआ।

इसके तत्पश्चात् इन्हीं घरानों की अंतिम कड़ी के रूप में संस्थागत शिक्षा प्रणाली शुरू हुई जिसके अन्तर्गत किसी विशेष शैक्षणिक संस्थान जैसे- स्कूल, कॉलेज, महाविद्यालय व विश्वविद्यालय के द्वारा एक निर्धारित पाठ्यक्रम और निश्चित नियमों के अन्दर शिक्षा ग्रहण की जाती है इस क्रम की शुरुआत में विष्णुद्वय ने संगीत के पुनरुत्थान हेतु संगीत शिक्षा को सर्वजन सुलभ बनाने में अपना विशेष अतुलनीय योगदान दिया जिसके परिणामस्वरूप 1886 में मौलाबख्श द्वारा सर्वप्रथम संगीत विद्यालय 'बड़ौदा स्टेट म्यूजिक स्कूल' की स्थापना की। इसी के साथ संस्थागत शिक्षा प्रणाली धीरे-धीरे विकसित होती गयी और विभिन्न काल विद्वानों द्वारा अपने – अपने ज्ञान रूपी जल से सींचा और इसकी उर्वरता में वृद्धि की। आज शैक्षणिक संस्थानों में संगीत की शिक्षा-दीक्षा की व्यवस्था व स्वरूप के चार मुख्य अंग माने जाते हैं। **विद्यार्थी, शिक्षक, शिक्षण पद्धति एवं मूल्यांकन।** जिसके परिणाम स्वरूप कालांतर में संस्थागत शिक्षा की शिक्षण प्रक्रिया दो प्रकार की संस्थाओं के माध्यम से हो रही है। **पहली वह संस्थाएं जो संगीत की शिक्षा देती हैं जिनके अन्तर्गत संगीत विद्यालय और विश्वविद्यालय के संगीत विभाग आते हैं और दूसरे वर्ग में अन्य विषयों के साथ संगीत की शिक्षा देने वाली संस्थाएं आती हैं।** दोनों का क्षेत्र भिन्न होते हुए भी पाठ्यक्रम एवं शिक्षण पद्धति में कोई बदलाव नहीं है। दोनों ही प्रकार की संस्थाओं में रुचि के अनुसार या संगीत का पूर्व ज्ञान रखने वाला विद्यार्थी तथा रुचि एवं पूर्व में सांगीतिक ज्ञान ना होने वाला विद्यार्थी भी संगीत के स्नातक कोर्स में प्रवेश कर एक साथ एक ही संसाधनों से संगीत शिक्षा ग्रहण करता है जबकि इन दोनों के लिए अलग-अलग प्रयोजन तय किये जाने चाहिए। शायद इसी कमी को दूर करने हेतु संगीत शिक्षा के पाठ्यक्रम हेतु दो प्रयोजन भी तय किये गए या कह सकते हैं कि दो प्रकार के कोर्स चलाए गए लेकिन उनका कठोरता से सभी विश्वविद्यालयों में पालन होते हुए मुझे नजर नहीं आता है। वह इस प्रकार है

1. संगीत के प्रति समझदारी पैदा करना**2. संगीत की व्यावसायिक शिक्षा देना।**

संगीत की सामान्य शिक्षा के लिये किसी विशेष प्रकार के संस्कार की आवश्यकता नहीं है किंतु विशेष शिक्षा के लिये सांगीतिक योग्यता होना बहुत जरूरी है तथा इन दोनों वर्गों के लिए सरल पाठ्यक्रम को सुगम संगीत से जोड़कर अलग तरीके से क्रियान्वित करने चाहिए। जबकि व्यावसायिक शिक्षा देने के लिए अलग पाठ्यक्रम चलाये जाने चाहिए, जिन्हें वही विद्यार्थी पढ़ें जिनमें सांगीतिक योग्यता हो, जिससे संगीत की गुणवत्ता बनी रहे और कुछ सार्थक परिणाम निकलकर आए तभी गुणवत्ता आयेगी साथ ही विद्यार्थी में सांगीतिक योग्यता भी विकसित होगी। इसी दोष को वर्तमान में दूर करने की बेहद आवश्यकता है। इसके साथ ही निम्नलिखित बिंदुओं पर भी उच्च शिक्षा संस्थानों को ध्यान ही नहीं सक्रिय रूप से नज़र रखनी चाहिए जैसे –

- उच्च शिक्षा संस्थानों में प्रवेश सम्बन्धी प्रक्रिया में बदलाव करना चाहिए। जिसमें सांगीतिक योग्यता के आधार पर कोर्स में प्रवेश मिले तथा सांगीतिक योग्यता परीक्षणों का भी सहारा लिया जा सकता है।
- विद्यार्थी की उपस्थिति प्रतिशत को कठोरता से लागू करना चाहिए क्योंकि ऐसा ना होने से समाज में यह संदेश जा रहा है कि रेग्युलर कोर्स भी निजी कोर्स की तरह ही पूर्ण कर लिये जाते हैं। जिससे कोर्स की गुणवत्ता पर प्रश्न चिन्ह लग रहे हैं।
- सभी विश्वविद्यालयों का पाठ्यक्रम कोर्सस के अनुसार एक समान होना चाहिए।
- रुचि रखने वालों के लिए अलग कोर्स जैसे डिप्लोमा या शॉर्ट टर्म कोर्सेज और संगीत के प्रति पूर्व में समझ रखने वालों तथा संगीत में करियर बनाने के उद्देश्य से सीखने वाले लोगों के लिए अलग कोर्स होना चाहिए जिससे संगीत योग्यता रखने वाला विद्यार्थी किसी नौसिखिया शिक्षार्थी के साथ संगीत ना सीखे।
- पाठ्यक्रम सरल से कठिन की ओर होना चाहिए ऐसा ना हो कि किसी विद्यार्थी को स्नातक के प्रथम वर्ष में ही अलंकार और थाट आश्रित राग सिखाने के बजाय वह कठिन राग सीखे। जिससे संगीत की आधार शिक्षा की नींव ही कमजोर हो जाए।
- उच्च शिक्षा संस्थानों से जुड़े जो छात्रालय हैं वहां रियाज की सुविधा होनी चाहिए जोकि शिक्षकों की निगरानी में हो।
- संगीत शिक्षण हेतु सभी जरूरी घटक मौजूद होने चाहिए जैसे शिक्षक, वाद्य यंत्र, बैठने की उचित व्यवस्था, पुस्तकालय आदि। इनमें से किसी एक का अभाव भी संगीत विद्यार्थी के लिए हानि होगी।

संगीत शिक्षा में आधारभूत समस्याएं तो हैं ही उसके साथ ही गंभीर समस्या उच्च शिक्षा संस्थानों में प्रवेश सम्बन्धी समस्या है विद्यार्थियों का चयन किस प्रकार से कर रहे हैं जिस प्रकार से उच्च शिक्षा संस्थानों के लिए शिक्षकों का चयन U.G.C नियमों के प्रक्रियानुसार होता है वैसे ही उच्च शिक्षा संस्थानों में संगीत कोर्स के दाखिला हेतु आवश्यकता है।

सबसे पहले यहाँ ये जानना जरूरी है कि **योग्यता शब्द का क्या अर्थ** होता है? योग्यता शब्द का अर्थ है किसी व्यक्ति की क्षमता या सामर्थ्य से होता है। जो कि किसी कार्य को करने या किसी पद को संभालने के लिए उपयुक्त बनाता है।

सांगीतिक योग्यताएं भी दो प्रकार की होती हैं—

1. **सांगीतिक मूल योग्यता** – जो व्यक्ति को जन्म के साथ ही मिलती है जिसे हम God Gifted Art भी कहते हैं।
2. **सांगीतिक अर्जित योग्यता**— जो व्यक्ति को उसकी रुचि और प्रशिक्षण के माध्यम से प्राप्त होती है।

सांगीतिक योग्यता के दो प्रमुख घटक होते हैं—

1. वंशानुगत सांगीतिक योग्यता— इसका अर्थ माता-पिता द्वारा स्वयं और पूर्वजों के गुणों को व्यक्ति में संचारित करने से है, जो कि 'जीन' के माध्यम से अपनी विशेषताएं एवं गुण को समाहित करता है।
2. वातानुकूल सांगीतिक योग्यता— इसमें व्यक्ति अपने माहौल से सीखता है वातावरण चाहे जैसा भी हो वह अपना प्रभाव अवश्य ही डालता है और वातावरण से सांगीतिक योग्यता विकसित होती है।

एक कुशल संगीतार्थी बनने के लिए केवल वंशानुगत से प्राप्त गुण ही प्रभावित नहीं करते बल्कि कलाकार बनने में वातावरण का भी प्रभाव होता है बिना सांगीतात्मक वातावरण मिले किसी भी व्यक्ति के लिये जिसमें संगीत रुचि हो, प्रतिभा हो, कलाकार बनना मुश्किल है।

Amram Scheunfeld ने अपनी पुस्तक *You and Her Duty* में बताया है कि जिन बच्चों के माता-पिता सांगीतिक प्रतिभावान होते हैं उन बच्चों में 70% सांगीतिक प्रतिभा होती है। जिन बच्चों के माता-पिता में से किसी एक में प्रतिभा होती है उन बच्चों में 60% सांगीतिक प्रतिभा होती है और जिन बच्चों के माता-पिता में से किसी में भी प्रतिभा नहीं होती है उन बच्चों में 15% सांगीतिक प्रतिभा होती है।

सांगीतिक योग्यता का महत्व—

सांगीतिक योग्यता इसलिए महत्वपूर्ण है ताकि संगीत विषय की गुणवत्ता में वृद्धि हो संगीत विषय का पतन ना हो। वैसे तो विद्यार्थी कच्ची मिट्टी के समान होते हैं, जैसे ढालोगे वैसे ही बन जायेंगे चूंकि यहां हम उच्च शिक्षा की बात कर रहे हैं तब वास्तव में विद्यार्थी में सांगीतिक योग्यता का होना आवश्यक हो जाता है नहीं तो विश्वविद्यालय से विद्यार्थी केवल डिग्री ही लेकर जायेगा उसका कोई सुखद परिणाम नहीं मिल पायेगा। यदि उच्च शिक्षा में सांगीतिक अयोग्य विद्यार्थियों को जब विश्वविद्यालय में प्रवेश मिल जाता है तब अक्सर विद्यार्थी और शिक्षकों को बहुत सी परेशानी झेलनी पड़ती है जैसे —

- कई बार संगीत विषय का चुनाव विद्यार्थी के अनुरूप नहीं होता है, उसे जबरन दे दिया जाता है हालांकि उसके पीछे कोर्स में घटती संख्या को बचाना और विषय को जिंदा रखने का कारण होता है। इस समस्या का निदान शासन व्यवस्था, यू.जी.सी., विश्वविद्यालयों और संगीतार्थी के लोगों को मिलकर करना चाहिए।
- कई बार हम देखते हैं कि शारीरिक या मानसिक रूप से डिस्एबल लोगों को संगीत स्नातक कक्षा में प्रवेश दे दिया जाता है जैसे— किसी का हकला होना, किसी को बैठकी में दिक्कत होना, किसी की ऊंगली का टेढ़ा होना या किसी का दिमागी रूप से अस्वस्थ होना, ये सभी कमियां संगीत गायन या वादन विषय के लिए उपयुक्त नहीं हैं।
- विद्यार्थी को संगीत, बिना पूर्व ज्ञान के होने के बावजूद भी विषय आवंटित करना आज की सबसे बड़ी समस्या बन रही है।

इसलिए विद्यार्थियों के उच्च शिक्षा हेतु प्रवेश करने के लिए महाविद्यालय एवं विश्वविद्यालय स्तर पर संगीत में विशेषज्ञों का एक बोर्ड गठित होना चाहिए। जिसके द्वारा विद्यार्थियों की योग्यता का परीक्षण कर यह तय किया जा सके उनमें से कौन से विद्यार्थी किस प्रकार के कोर्स में प्रवेश लेंगे सांगीतिक योग्यता उच्च शिक्षा के लिए इसलिए ही आवश्यक हैं। जिससे इन कमियों को दूर किया जा सके।

सांगीतिक योग्यता हेतु परीक्षण — उपर्युक्त वर्णित इन सभी प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष समस्याओं से उभरने के लिए संगीत के क्षेत्र में कुछ मनोवैज्ञानिकों ने परीक्षण पद्धति का निर्माण किया था, जिसका प्रयोग करके सांगीतिक योग्यता का आंकलन किया जा सकता है।

एक अमेरिकी मनोवैज्ञानिक **Carl Seashore** के अनुसार — इन्होंने संगीत से जुड़ी सांगीतिक योग्यता व क्षमताओं का परीक्षण करने हेतु **1919** में **Seashore Measure of Musical Talent** परीक्षण को प्रकाशित किया था जिसमें के द्वारा व्यक्ति की श्रवण शक्ति और ध्वनि की बुनियादी समझ का परीक्षण किया जाता है —

1. Sense of Time and Rhythm
2. Sense of Intensity
3. Sense of Pitch
4. Sense of Timber
5. Tonal Memory

Seashore के बाद 1939 में Herbert D. Wings द्वारा एक परीक्षण तैयार किया (जो कि 1962 और 1968 के परीक्षणों का सुधार था।) जिसका नाम था Wings Standardised Test of Musical Intelligence में उल्लिखित परीक्षण प्रयोगों में जो प्रमुख है वो इस प्रकार है—

1. Chord Analysis
2. Harmony
3. Memory
4. Rhythmic Accent
5. Pitch Change
6. Intensity
7. Phrasing

इनके बाद **Drak's Musical Aptitude test** को भी महत्वपूर्ण माना गया है जो कि दो प्रकार के है—

1. Musical Memory Test
2. Rhythm Test

1953 में Reverz नामक मनोवैज्ञानिक ने कुछ नए सांगीतिक परीक्षणों को निर्देशित किया—

1. Compasing
2. Reproduction
3. Hearing
4. Memory
5. Emprovising
6. Modulation
7. Musical Element
8. Plaxing at sight

इसी क्रम में **भारतीय मूल मनोवैज्ञानिक डॉ० एस०एस० अवस्थी** द्वारा विद्यार्थियों की सांगीतिक योग्यता के आधार पर ही चयन प्रणाली को उचित ठहराया, उनके द्वारा सांगीतिक योग्यता परीक्षण से इसे जाँचा जा सकता है और इन परीक्षणों के माध्यम से यह निश्चित करने में काफी मदद मिल सकेगी कि विद्यार्थी संगीत की किस विधा के लिए उचित है, जिससे योग्य व प्रतिभा सम्पन्न ही विशेष कौशल के नजरिए से संगीत की किसी विशिष्ट धारा में प्रशिक्षित हो सकेंगे। इन्होंने सांगीतिक योग्यता के लिखित व श्रवण सम्बन्धी परीक्षणों का सुझाव दिया जैसे—

1. लिखित परीक्षण हेतु —

- Musical General Knowledge Test
- Musical Symbol Knowledge Test

- Notation test

2. सांगीतिक योग्यता के श्रवण सम्बन्धी परीक्षण

- Pitch Discrimination Test
- Intensity Discrimination Test
- Timbre Test
- Tonal Test
- Tonal Memory Test
- Rhythm Test
- Raga Recognition Test
- Creative Repetition Test

इन सभी परीक्षणों के नाम से ही मालूम चल रहा है कि ये किस प्रकार से सांगीतिक योग्यता में सहयोग देते होंगे। इस प्रकार अन्य मनोवैज्ञानिकों ने भी इसके अतिरिक्त सांगीतिक योग्यता हेतु अनेक परीक्षण बताए हैं जो निश्चित ही संगीत के लिए उपयोगी हैं। ये मेरे लिए आश्चर्य की बात है कि इन सभी परीक्षणों के बारे में इस शोध पत्र को लिखते समय पढ़ने के दौरान ही मालूम चला शायद इसलिए अछूता रहा होगा कि यह कभी पाठ्यक्रम का हिस्सा नहीं रहा।

उच्च शिक्षा हेतु सांगीतिक योग्यताएं—

- संगीत का प्रारम्भिक एवं सामान्य ज्ञान हो।
- स्वर और लय का ज्ञान हो।
- स्वरलिपि का सामान्य ज्ञान आवश्यक है। अक्सर विद्यार्थियों में यह ज्ञान भ्रमित ज्ञान के रूप में होता है जिसके कारण उनको लिखने और पढ़ने में कठिनाई होती है और जो चीज जब जिस समय समझनी होती है तब वह नहीं समझ पाते हैं।
- शुद्ध स्वरोच्चारण करने वाला हो, जिससे बाद में आकार में भी गा सके और सभी स्वरों को अच्छे से गाने में समर्थ हो।
- संगीत विषय के लिए तो विद्यार्थियों में स्मरण शक्ति बहुत ही अच्छी होनी चाहिए जिससे उन्हें बंदिश याद करने में दिक्कत ना हो और अन्य संगीत पाठ्य सामग्री याद रह सके।
- प्रस्तुति देते समय सुन्दर मुद्रा का गुण विद्यार्थी में होना ही चाहिए, वादक विद्यार्थी को श्रमरहित मुद्रा में बैठना आना चाहिए, वह अनावश्यक हाथ पैर ना फेंके। आँखें ना बंद कर लेते हो, प्रस्तुतीकरण करते समय अनावश्यक शारीरिक सभी गतिविधियों का परहेज करना आना चाहिए।
- कल्पनाशील का गुण होना चाहिए, क्योंकि संगीत, संगीतज्ञ की ही कल्पना है वह सिर्फ थोड़े से शब्दों में अपनी उन कल्पनाओं को व्यक्त कर सकता है।
- विद्यार्थी धैर्यवान होना चाहिए क्योंकि वह अक्सर पहली ही कक्षा में आने के बाद ये कल्पना करने लगते हैं कि तुरंत ही सब कुछ गा-बजा ले, जो कि ऐसा होना संभव नहीं है, जिसके कारण विद्यार्थियों का मन भटकने लगता है, अगर वह इस गुण से पहले से ही निहित होंगे तो यह स्थिति नहीं आयेगी।
- अनुशासित एवं नियमबद्ध हो — आजकल विश्वविद्यालयों में छात्र-छात्राओं के साथ एक समस्या बहुतायत रूप में देखने को मिल रही है कि विद्यार्थी प्रतिदिन कक्षा में नहीं आते हैं। सप्ताह में एक दिन-या दो दिन उपस्थित होते हैं, जिससे कक्षा की निरंतरता टूटती है और फिर कक्षा और पाठ्यक्रम का कोई परिणाम नहीं मिलता है। इसलिए विद्यार्थी को प्रतिदिन कक्षा में आना चाहिए।

- वह ईमानदार और निष्ठावान भी होना चाहिए, जिससे वह शिक्षक के निर्देशानुसार रियाज़ करे।
- 'आसन सिद्धि' का बड़ा ही महत्व है, विद्यार्थी एक ही आसन पर निरंतर बैठ कर रियाज़ कर सके ऐसी उसमें क्षमता होनी ही चाहिए तभी वह निर्धारित अभ्यास क्रम सीख सकेगा।
- आत्मविश्वास— संगीत विद्यार्थी के लिए आत्म विश्वास का होना बहुत आवश्यक है और यह तभी संभव है, जब उसे पूर्व ज्ञान होगा।
- संगीत विद्यार्थी के लिए एक सांगीतिक गुण तो बहुत ही जरूरी है वो है समर्पण भाव, अपने गुरु के प्रति पूरी निष्ठा और समर्पण होना चाहिए। संगीत की शिक्षा ग्रहण करने का कोई शॉर्ट कट नहीं है इसलिए जरूरी है पूरा समय देकर गुरु से सीखना।
- रचनात्मकता का गुण होना चाहिए ताकि वह खुद भी कुछ रचनायें कर सके जैसे तानों में अपने अनुसार कुछ नवीन करके प्रस्तुति में जान डाल सके यह तभी संभव जब वह स्वयं रचनात्मक होंगे।
- संगीत के लिए श्रवण सम्बन्धी गुण होना चाहिए। संगीत में एक कहावत है कि तानसेन न बन सको तो कानसेन तो होना ही चाहिए।

निष्कर्ष

इस प्रकार उच्च शिक्षा में विद्यार्थी वर्ग का परम कर्तव्य हो जाता है कि वह किसी न किसी प्रकार से संगीत के वास्तविक रूप का ज्ञान प्राप्त करें और निर्णय ले कि वह संस्थागत शिक्षा पद्धति में किस प्रकार से जुड़ना चाहता है वह उसी प्रकार से अपने आप को तैयार करें और उच्च शिक्षा पाने में उसे जो भी समस्याएं आ रही हैं उसका अपनी कला पर प्रभाव ना पड़ने दे, क्योंकि उच्च शिक्षा प्रणाली के अंतर्गत संगीत की शिक्षा को अनेक संगीतार्थी तक पहुंचाने का कार्य निरन्तर चल रहा है। विश्वविद्यालय संगीत की औपचारिक शिक्षा की ओर प्रतिदिन अपना बेहतर करने का प्रयास कर रहा है और आगे भी करता रहेगा। आने वाली सभी समस्याओं को नजर करता रहेगा समाधान की ओर। विद्यार्थी को केवल अपनी सांगीतिक यात्रा जारी रखनी है और उसके लिए उसे एक आदर्श विद्यार्थी के गुणों से परिपूर्ण होना होगा। आदर्श विद्यार्थी के लिए जो सांगीतिक योग्यताएं होनी चाहिए कि वह "सभी संवेदनाओं से परिपूर्ण स्वर—सुरीला लयबद्ध, शुद्ध उच्चारण, आत्मविश्वास के साथ उचित भाव भंगिमा, मुद्रा में अनुशासित होकर सुंदर प्रस्तुति देकर संगीत का श्रवण कर्णप्रियता से स्वरलिपि को रच सकने में समर्थ हो गुरु के प्रति निष्ठावान होकर संगीत के चरणों में अपनी सच्ची लगन श्रद्धा को समर्पित करें" ऐसी योग्यता ही एक आदर्श संगीतार्थी की आवश्यकता है जो संगीत को संरक्षित और संवर्धित करें। सांगीतिक योग्यताएं एक कुशल संगीतज्ञ बनाने में सहायक होती हैं और विधिवत शिक्षा के बिना तो सांगीतिक प्रतिभा भी अधूरी रह जाती है। वस्तुतः कलाकार जन्मजात नहीं होता है परन्तु व्यक्ति अपने संगीतात्मक गुण प्रयास और प्रशिक्षण के द्वारा ही कलाकार बनता है।

सन्दर्भ

1. पटवर्धन, सुधा। (2014). स्मरण शक्ति, लोक भारती प्रकाशन, दिल्ली (प्रथम संस्करण) पृ0सं0—55
2. शर्मा, स्वतन्त्र। (2005). सौन्दर्य रस एवं संगीत, प्रतिभा प्रकाशन, दिल्ली प्रथम संस्करण) पृ0सं0—323
3. पाठक, जगदीश नारायण। (1983). संगीत मार्तण्ड, पाठक प्रकाशक, इलाहाबाद, (संशोधित संस्करण) पृ0सं0—126,—127, 138
4. शर्मा, राधिका। (2006). भारतीय संगीत संस्थानों और मीडिया का योगदान, संजय प्रकाशक, दिल्ली। (प्रथम संस्करण) पृ0सं0—11
5. दत्ता, पूनम। (2005). भारतीय संगीत शिक्षा और उद्देश्य, राज पब्लिकेशन, दिल्ली। (प्रथम संस्करण) पृ0सं0—31, 37
6. सिंह, संगीता। (2013). भारतीय संगीत एवं शिक्षण प्रणाली, सृजन समिति, वाराणसी। (प्रथम संस्करण) पृ0सं0—86

7. सक्सेना, मधुबाला। (1990). भारतीय संगीत शिक्षण प्रणाली एवं उसका वर्तमान स्तर, हरियाणा साहित्य अकादमी, चण्डीगढ़। पृ०सं०—**62,164,167**
8. माथुर, निशि। (2001). कला एवं कलाकार, पब्लिकेशन स्कीम जयपुर,। (प्रथम संस्करण) पृ०सं०—**47,136**
9. नाहर, साहित्य कुमार। भारतीय संगीत परिचयात्मक बोध, पृ०सं०—**45, 66,**
10. चौधरी, सुभद्रा। संगीत संचयन, पृ०सं०—**15—16**
11. उप्पल, सविता। संगीत शिक्षण और मनोविज्ञान, मार्डन बुक हाउस, चण्डीगढ़ पृ०सं०—**16, 20**
12. दीक्षित, प्रदीप कुमार। “आदर्श संगीत शिक्षा व्यवस्था।” संगीत पत्रिका, माह सितम्बर, 2010, पृ०सं०—**241—42**
13. काजमी, स्वामी वाहिद। “म्यूजिक में कैरियर।” संगीत पत्रिका, माह मार्च, 2012, पृ०सं०—**21—22**
14. केदारनाथ, ईश्वरचन्द्र। “वर्तमान संगीत शिक्षा में अदार्श शिक्षक की भूमिका।” सम्पादक डा. पुष्पम नारायण, भैरवी संगीत शोध पत्रिका, अंक—9 वर्ष 2014, ISSN 0975—5219 पृ०सं०—**14**
15. जौहरी, रेनू एवं मिश्रा, मनीषा। “गुरु शिष्य परम्परा तथा संस्थागत शिक्षण प्रणाली एक तुलनात्मक अध्ययन।” सम्पादक डा. पुष्पम नारायण, भैरवी संगीत शोध पत्रिका, अंक—9 वर्ष 2014, ISSN 0975—5219, पृ०सं०—**16—17**
16. होरा, श्रुति। “सांगीतिक योग्यता और सांगीतिक अभिरुचि।” Confluence of knowledge, Vol.3, Issue, 3&4 July-December, 2015, ISSN 2320-5237(online) पृ०सं०—**40—41,44**